

२. मैं बरतन माँजूंगा

- हमराज भट्ट 'बालसखा'

'नम्रता होती है जिनके पास, उनका ही होता दिल में वास।' इस विषय पर अन्य सुवचन तैयार कीजिए :-

मौलिक सृजन

कृति के लिए आवश्यक सोपान :

- 'नम्रता' आदर भाव पर चर्चा करवाएँ।
- विद्यार्थियों को एक दूसरे का व्यवहार/स्वभाव का निरीक्षण करने के लिए कहें।
- 'नम्रता' विषय पर सुवचन बनवाएँ।

बचपन में कोर्स से बाहर की कोई पुस्तक पढ़ने की आदत नहीं थी। कोई पत्र-पत्रिका या किताब पढ़ने को मिल नहीं पाती थी। गुरु जी के डर से पाठ्यक्रम की कविताएँ मैं रट लिया करता था। कभी अन्य कुछ पढ़ने की इच्छा हुई तो अपने से बड़ी कक्षा के बच्चों की पुस्तकें पलट लिया करता था। पिता जी महीने में एक-दो पत्रिका या किताब अवश्य खरीद लाते थे किंतु वह उनके ही स्तर की हुआ करती थी। इसे पलटने की हमें मनाही हुआ करती थी। अपने बचपन में तीव्र इच्छा होते हुए भी कोई बालपत्रिका या बच्चों की किताब पढ़ने का सौभाग्य मुझे नहीं मिला।

आठवीं पास करके जब नौवीं कक्षा में भरती होने के लिए मुझे गाँव से दूर एक छोटे शहर भेजने का निश्चय किया गया तो मेरी खुशी का पारावार न रहा। नई जगह, नए लोग, नए साथी, नया वातावरण, घर के अनुशासन से मुक्त, अपने ऊपर एक जिम्मेदारी का एहसास, स्वयं खाना बनाना, खाना, अपने बहुत से काम खुद करने की शुरुआत-इन बातों का चिंतन भीतर-ही-भीतर आह्लादित कर देता था। माँ, दादी और पड़ोस के बड़ों की बहुत सी नसीहतों और हिदायतों के बाद मैं पहली बार शहर पढ़ने गया। मेरे साथ गाँव के दो साथी और थे। हम तीनों ने एक साथ कमरा लिया और साथ-साथ रहने लगे।

हमारे ठीक सामने तीन अध्यापक रहते थे-पुरोहित जी जो हमें हिंदी पढ़ाते थे; खान साहब बहुत विद्वान और संवेदनशील अध्यापक थे। यों वह भूगोल के अध्यापक थे किंतु संस्कृत छोड़कर वे हमें सारे विषय पढ़ाया करते थे। तीसरे अध्यापक विश्वकर्मा जी थे जो हमें जीव-विज्ञान पढ़ाया करते थे।

गाँव से गए हम तीनों विद्यार्थियों में उन तीनों अध्यापकों के बारे में पहली चर्चा यह रही कि वे तीनों साथ-साथ कैसे रहते और बनाते-खाते हैं। जब यह ज्ञान हो गया कि शहर में गाँवों जैसा ऊँच-नीच, जात-पाँत का भेदभाव नहीं होता, तब उन्हीं अध्यापकों के बारे में एक दूसरी चर्चा हमारे बीच होने लगी।

परिचय

हमराज भट्ट की बालसुलभ रचनाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। आपकी कहानियाँ, निबंध, संस्मरण विविध पत्र-पत्रिकाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान पाते रहते हैं।

गद्य संबंधी

आत्मकथात्मक कहानी : इसमें स्वयं या कहानी का कोई पात्र 'मैं' के माध्यम से पूरी कहानी का आत्म चित्रण करता है।

प्रस्तुत पाठ में लेखक ने समय की बचत, समय के उचित उपयोग एवं अध्ययनशीलता जैसे गुणों को दर्शाया है।

होता यह था कि विश्वकर्मा सर रोज सुबह-शाम बरतन माँजते हुए दिखाई देते । खान साहब या पुरोहित जी को हमने कभी बरतन धोते नहीं देखा । विश्वकर्मा जी उम्र में सबसे छोटे थे । हमने सोचा कि शायद इसीलिए उनसे बरतन धुलवाए जाते हैं और स्वयं दोनों गुरु जी खाना बनाते हैं; लेकिन वे बरतन माँजने के लिए तैयार होते क्यों हैं ? हम तीनों में तो बरतन माँजने के लिए रोज ही लड़ाई हुआ करती थी । मुश्किल से ही कोई बरतन धोने के लिए राजी होता ।

* विश्वकर्मा सर को और शौक था-पढ़ने का । मैं उन्हें जब भी देखता, पढ़ते हुए देखता । गजब के पढ़ाकू थे वे । एकदम किताबी कीड़ा । धूप सेंक रहे हैं तो हाथों में किताब खुली है । टहल रहे हैं तो पढ़ रहे हैं । स्कूल में भी खाली पीरियड में उनकी मेज पर कोई-न-कोई पुस्तक खुली रहती । विश्वकर्मा सर को ढूँढ़ना हो तो वे पुस्तकालय में मिलेंगे । वे तो खाते समय भी पढ़ते थे ।

उन्हें पढ़ते देखकर मैं बहुत ललचाया करता था । उनके कमरे में जाने और उनसे पुस्तकें माँगने का साहस नहीं होता था कि कहीं घुड़क न दें कि कोर्स की किताबें पढ़ा करो । बस, उन्हें पढ़ते देखकर, उनके हाथों में रोज नई-नई पुस्तकें देखकर मैं ललचाकर रह जाता था । कभी-कभी मन करता कि जब बड़ा होऊँगा तो गुरु जी की तरह ढेर सारी किताबें खरीद लाऊँगा और ठाट से पढ़ूँगा । तब कोर्स की किताबें पढ़ने का झंझट नहीं होगा । *

एक दिन धुले बरतन भीतर ले जाने के बहाने मैं उनके कमरे में चला गया । देखा तो पूरा कमरा पुस्तकों से भरा था । उनके कमरे में आलमारी नहीं थी इसलिए उन्होंने जमीन पर ही पुस्तकों की ढेरियाँ बना रखी थीं । कुछ चारपाई पर, कुछ तकिए के पास और कुछ मेज पर करीने से रखी हुई थीं । मैंने बरतन एक ओर रखे और स्वयं उस पुस्तक प्रदर्शनी में खो गया । मुझे गुरु जी का ध्यान ही नहीं रहा जो मेरे साथ ही खड़े मुझे देखकर मंद-मंद मुसकरा रहे थे ।

मैंने एक पुस्तक उठाई और इत्मीनान से उसका एक-एक पृष्ठ पलटने लगा ।

गुरु जी ने पूछा, “पढ़ोगे ?”

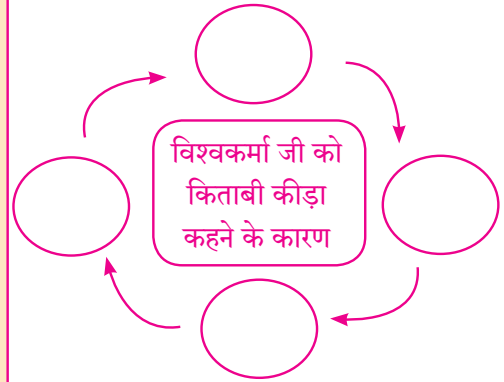
मेरा ध्यान टूटा । “जी पढ़ूँगा ।” मैंने कहा ।

उन्होंने तत्काल छाँटकर एक पतली पुस्तक मुझे दी और कहा, “इसे पढ़कर लौटा देना और दूसरी ले जाते रहना ।”

मेरे हाथ जैसे कोई बहुत बड़ा खजाना लग गया हो । वह पुस्तक मैंने एक ही रात में पढ़ डाली । उसके बाद गुरु जी से लेकर पुस्तकें पढ़ने का मेरा क्रम चल पड़ा ।

मेरे साथी मुझे चिढ़ाया करते थे कि मैं इधर-उधर की पुस्तकों

* सूचनानुसार कृतियाँ कीजिए :
(१) संजाल पूर्ण कीजिए



(२) डाँटना इस अर्थ में आया हुआ मुहावरा लिखिए ।

(३) परिच्छेद पढ़कर प्राप्त होने वाली प्रेरणा लिखिए ।



दूसरे शहर-गाँव में रहने वाले अपने मित्र को विद्यालय के अनुभव सुनाइए ।

से समय बरबाद करता हूँ किंतु वे मुझे पढ़ते रहने के लिए प्रोत्साहित किया करते थे। वे कहते, “जब कोर्स की पुस्तक पढ़ते-पढ़ते ऊब जाओ तब झट कोई बाहरी रुचिकर पुस्तक पढ़ा करो। विषय बदलने से दिमाग में ताजगी आ जाती है।”

इस प्रयोग से पढ़ने में मेरी भी रुचि बढ़ गई और विषय भी याद रहने लगे। वे स्वयं मुझे ढूँढ़-ढूँढ़कर किताबें देते। पुस्तक के बारे में बता देते कि अमुक पुस्तक में क्या-क्या पठनीय है। इससे पुस्तक को पढ़ने की रुचि और बढ़ जाती थी। कई पत्रिकाएँ उन्होंने लगवा रखी थीं, उनमें बाल पत्रिकाएँ भी थीं। उनके साथ रहकर बारहवीं कक्षा तक मैंने खूब स्वाध्याय किया।

धीरे-धीरे हम मित्र हो गए थे। अब मैं निःसंकोच उनके कमरे में जाता और जिस पुस्तक की इच्छा होती, पढ़ता और फिर लौटा देता।

उनका वह बरतन धोने का क्रम ज्यों-का-त्यों बना रहा। अब उनके साथ मेरा संकोच बिलकुल दूर हो गया था। एक दिन मैंने उनसे पूछा, “सर ! आप केवल बरतन ही क्यों धोते हैं ? दोनों गुरु जी खाना बनाते हैं और आपसे बरतन धुलवाते हैं। यह भेदभाव क्यों ?”

वे थोड़ा मुस्काए और बोले, “कारण जानना चाहोगे ?”

मैंने कहा, “जी।”

उन्होंने पूछा, “भोजन बनाने में कितना समय लगता है ?”

मैंने कहा, “करीब दो घंटे।”

“और बरतन धोने में ?”

मैंने कहा, “यही कोई दस मिनट।”

“बस यही कारण है।” उन्होंने कहा और मुस्कराने लगे। मेरी समझ में नहीं आया तो उन्होंने विस्तार से समझाया, “देखो ! कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता। मैं बरतन इसलिए धोता हूँ क्योंकि खाना बनाने में पूरे दो घंटे लगते हैं और बरतन धोने में सिर्फ दस मिनट। ये लोग रसोई में दो घंटे काम करते हैं, स्टोव का शोर सुनते हैं और धुआँ अलग से सूँघते हैं। मैं दस मिनट में सारा काम निबटा देता हूँ और एक घंटा पचास मिनट की बचत करता हूँ और इतनी देर पढ़ता हूँ। जब-जब हम तीनों में काम का बँटवारा हुआ तो मैंने ही कहा कि मैं बरतन माँजूँगा। वे भी खुश और मैं भी खुश।”

उनका समय बचाने का यह तर्क मेरे दिल को छू गया। उस दिन के बाद मैंने भी अपने साथियों से कहा कि मैं दोनों समय बरतन धोया करूँगा। वे खाना पकाया करें। वे तो खुश हो गए और मुझे मूर्ख समझने लगे, जैसे हम विश्वकर्मा सर को समझते थे लेकिन मैं जानता था कि मूर्ख कौन है।



नीतिपरक पुस्तकें पढ़िए। पाठ्यपुस्तक के अलावा अपने सहपाठियों एवं स्वयं द्वारा पढ़ी हुई पुस्तकों की सूची बनाइए।



‘कोई काम छोटा या बड़ा नहीं होता’ इस पर एक प्रसंग लिखकर उसे कक्षा में सुनाइए।



आकाशवाणी से प्रसारित होने वाला एकांकी सुनिए।

पाठ के आँगन में

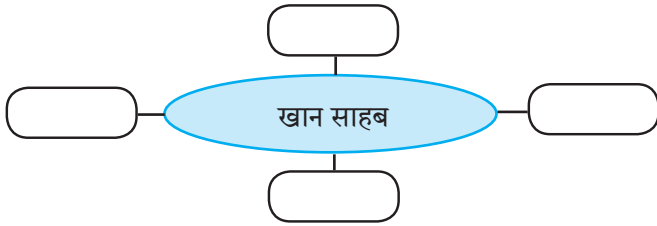
(१) कारण लिखिए :-

(क) मित्रों द्वारा मूर्ख समझे जाने पर भी लेखक महोदय खुश थे क्योंकि

(ख) पुस्तकों की ढेरियाँ बना रखी थीं क्योंकि

(२) 'अध्यापक के साथ विद्यार्थी का रिश्ता' विषय पर स्वमत लिखिए ।

(३) संजाल पूर्ण कीजिए :



शब्द संसार

एहसास (पुं.सं.) = आभास, अनुभव

नसीहत (स्त्री.सं.) = उपदेश/सीख

हिदायत (स्त्री.सं.) = निर्देश, सूचना

कौर (पु.सं) = ग्रास, निवाला

इत्मीनान (पुं.अ.) = विश्वास, आराम

मुहावरा

घुड़क देना = जोर से बोलकर

डराना, डाँटना

पाठ से आगे

'स्वयं अनुशासन' पर कक्षा में चर्चा कीजिए तथा इससे संबंधित तक्तियाँ बनाइए ।

भाषा बिंदु

रचना की दृष्टि से वाक्य पहचानकर अन्य एक वाक्य लिखिए :

(१) जब पाठ्यक्रम की पुस्तक पढ़ते-पढ़ते ऊब जाओ तब झट कोई बाहरी रुचिकर पुस्तक पढ़ा करो ।

(२) -----



(१) इसे पढ़कर लौटा देना और दूसरी ले जाते रहना ।

(२) -----

वाक्य पहचानिए

(१) धीरे-धीरे हम मित्र हो गए थे।

(२) -----

रचना बोध

.....

